



गहलोत सरकार के जाने के ग्यारह महीने बाद अभी भी उस सरकार की बात करने की इतनी उत्कंठा क्यों?



राजेश शर्मा
प्रधान सम्पादक
राष्ट्रदूत

ल गभग साल ६१ र पहले, राष्ट्रपति ने रॉ के पुराने चीफ, ए.एस. दुलत साहब की नई किताब "लाइफ इन द

शैडोज़" पर एक "बुक इवेंट" (पुस्तक पर गहन चर्चा) आयोजित किया था। दुलत साहब राजस्थान कैडर के आई.पी.एस. अफसर थे, पर अधिकतर दिल्ली में केन्द्रीय सरकार की विभिन्न एजेंसियों, जैसे आई.बी., रॉ आदि में "पोस्टेड" रहे, अतः उनके लिए आयोजित "इवेंट" काफी रोचक व "पापुलर" रहा, विशेषकर, राजस्थान पुलिस उच्चाधिकारियों में। "वर्ड ऑफ़ माउथ" से इवेंट दिल्ली के "इन्स्टीट्यूट ऑफ़ सॉल्यूटिव" में भी काफी चर्चित रहा। दिल्ली के जिमखाना क्लब में मेरी जब भी "इन्स्टीट्यूट ऑफ़िसरों" से मुलाकात व चर्चा हुई, तो उनके सभी पुराने साथियों ने "दुलत साहब" की किताब को "हाइ लाइट" करने को सतही तौर पर काफी सराहा पर मुझे महसूस हुआ, कि, इस सर्किल में दुलत साहब की किताब को लेकर थोड़ी सी "अनईजिनेस" (बेचैनी सी) भी है।

रॉ के एक रिटायर्ड वरिष्ठतम अधिकारी से, जिसे कालान्तर में थोड़ा मैं गहराई से जानने लगा, एक शाम को अपनी इस "अनईजिनेस" के अहसास को मैंने शेयर किया और इस अनईजिनेस का कारण जानने की कोशिश की, क्योंकि "बुक इवेंट" के बाद मैंने दुलत

सरकारी तंत्र, सरकारी प्रशासन "लाइन ऑफ़ कमाण्ड" (आदेशों की शृंखला) के मार्फत काम करता है। जिला स्तर पर, उदाहरण के लिए पुलिस तंत्र में एस.पी., एडिशनल एस.पी., थानाधिकारी आदि की शृंखला होती है। गहलोत ने विधायक को प्रशासन की धुरी बनाकर यह "लाइन ऑफ़ कमाण्ड" तोड़ दिया था और, सभी स्तर के कर्मचारी केवल विधायक की ओर देखने लगे अगले आदेश की प्रतीक्षा में। वरिष्ठता केवल "अलंकार" बनकर रह गयी, उसका प्रशासनिक महत्व लगभग खत्म हो गया। इस प्रशासनिक अराजकता से बचने के लिए, पुराने मुख्यमंत्री, कम से कम भैरोंसिंह शेखावत तक, विधायकों की, अफसर की ट्रांसफर-पोस्टिंग की मांग पर दो टूक जवाब देते थे, "तुम्हारे कहने पर अफसर तो हटा देता हूँ, पर उसकी जगह किसे लगाऊँ यह मैं ही निर्णय लूंगा।" मुख्यमंत्री अशोक गहलोत ने ट्रांसफर पोस्टिंग का पूरा अधिकार विधायक को ही दे दिया था, इससे प्रशासनिक अराजकता तो फैलनी ही थी। पुराने मुख्यमंत्रियों ने तो प्रशासनिक अराजकता को फैलने से रोकने के लिए कुछ नीतियां-रीतियां बनाईं, लेकिन, गहलोत ने इस अराजकता को सींचने के लिए, पनपाने के लिए, बांध के सब गेट खोल दिये थे। नारा था, प्रशासनिक अराजकता जाए भाड़ में, लेकिन, मेरी सलतनत सुरक्षित बनी रहे। सरकारी व प्रशासनिक संस्थानों की तोड़-मरोड़ की गूँज ग्यारह महीने बाद भी सुनी जा सकती है। और भ्रष्टाचार के इस पहिए को थमने और पलटने में ना जाने कितने वर्ष लगेंगे।

रॉ के पूर्व चीफ़ दुलत साहब की किताब पर पुलिस के उच्चतम क्षेत्र में "अनईजिनेस" थी, कि उन्होंने वो सब लिख दिया जो लोगों को मालूम तो था पर विश्वसनीयता संदिग्ध थी। किताब ने सब बातों को सत्यापित कर दिया। यही बात "करप्शन" को लेकर है। सब जानते थे कि थोड़ा करप्शन तो होता ही है, पर गहलोत ने विधायक को कॉन्स्टिट्यूएण्ट्स का मुख्यमंत्री बताकर करप्शन को सरकारी मान्यता दे दी। करप्शन इतना बेधड़क, खुल्लम-खुला होने लगा कि सचिवालय में सरकारी अलमारी में "रिश्वत" का सोना व रुपये पकड़े गये, पर जाँच की औपचारिकता ही पूरी हुई।

देकर, कि स्थानीय विधायक ही अपनी "कॉन्स्टिट्यूएण्ट्स" (चुनाव क्षेत्र) का मुख्यमंत्री है। उसकी ही चलेगी, और सरकारी मशीनरी उस को समर्थन/सहयोग दे। इस नई व्यवस्था में सरकारी "इन्स्टीट्यूशन", (प्रशासन) की परम्पराएं शून्य, प्रभावहीन तो होनी ही थीं और यहीं से खाओ और खाने दो की ही नहीं, बल्कि खाना जायज़ है, की

एक उदाहरण जयपुर के नज़दीक कोटपूतली कस्बे का है। वहाँ "तथाकथित" सरकारी मापदण्ड के अनुसार रोड चौड़ी करने के लिए 150 घरों व दुकानों में भारी तोड़फोड़ की गई। कड़ियों के पास खेतड़ी राज्य के पट्टे मौजूद थे, अन्य के पास नगर पालिका द्वारा स्वीकृत नक्शे थे। पर स्थानीय प्रशासन के लिये विधायक क्षेत्र का "घोषित मुख्यमंत्री" था। पीड़ित जनता ने न्यायालय से भी आदेश प्राप्त किये, पर न्यायालय के आदेश भी तो अंततोगत्वा प्रशासन ही लागू करता है।

व्यवस्था बैठाई गई। यह सिस्टम कैसे बना इसकी डीटेल चर्चा आगे करेंगे, किंतु "करप्शन" इतना, बेधड़क, खुल्लम-खुल्ला होने लगा, कि सचिवालय में सरकारी अलमारी में "रिश्वत" का सोना व रुपये पकड़े गये, पर जाँच की औपचारिकता ही पूरी की गई। "नेट

सन् 1989 के लोकसभा चुनाव प्रचार के दौरान जोधपुर वासी जिस भी काम के लिए कहते, उनका जवाब होता था, "यह स्थानीय मामला है, कोई दिल्ली का काम हो तो बताओ" तंग आकर एक आदमी ने हजार रुपये का नोट निकाल कर दिया और कहा, "दिल्ली के चांदनी चौक में बाबा छाप जर्द का तम्बाकू मिलता है, अगली बार दिल्ली से आये तो दो डिब्बे लेते आइयेगा।"



गहलोत के मन में कहीं भी कुछ ग्लानि तक नहीं आती कि उन्होंने राज्य में प्रजातंत्र की जड़ें उखाड़कर फेंक दीं। वे मन से विश्वास करते हैं कि राजा को बनाये रखना ही राजधर्म है। करप्शन को राजधर्म बनाने के मूल सिद्धान्त को वे कतई बुरा नहीं मानते। उनकी सरकार जाने के ग्यारह माह बाद गहलोत के बारे में बात करने की उत्कंठा क्यों है? इस संदर्भ में रामायण का प्रसंग याद आता है। जब मूर्छित रावण को उमाका साथी लंका वापस ले जा रहा था, लक्ष्मण घायल रावण को खत्म करने के लिए तत्पर थे। राम ने उन्हें रोका और कहा कि रावण को सबके सामने युद्ध में पराजित करके मारना जरूरी है, ताकि यह साबित हो जाए कि अधर्म के रास्ते चल कर, फरेब से, छल से चाहे कोई सोने की लंका बना ले, उसका अन्त अशुभ व विध्वंसकारी होता है।

है, जिससे यह सदा के लिये साबित हो जाये कि अधर्म के रास्ते पर चलकर फरेब से, छल से, चाहे कोई सोने की लंका तो बना ले, पर इसका अन्त अशुभ और विध्वंसकारी ही होता है। राम के कहने का आशय था कि रावण कोई चिन्दी चोर नहीं था, जिसे रात के अंधेरे में गिरफ्तार कर दण्ड देना पर्याप्त है।

किसी भी मायने में गहलोत भी कोई चिन्दी चोर नहीं थे। अतः उन्हें भी चुनाव में हरा देना काफी नहीं है। उनकी हार पर चर्चा करना जरूरी है, क्योंकि, कई मायनों में तो वह "युग पुरुष" थे, जिसने सरकार की, प्रशासन की परिभाषा ही बदल दी, अपने कार्यकाल में अशोक गहलोत ने अपने कार्यकाल में भ्रष्टाचार और रिश्वत खोरी को "इन्स्टीट्यूशनलाइज़" कर दिया। यानी सरकारी सिस्टम का "जायज़" हिस्सा बना दिया, यह नारा देकर कि विधायक ही अपने क्षेत्र का मुख्यमंत्री है।

अनंद द ग्राउण्ड यह प्रतिनिधित्व हुआ, और उसका एक मूल उदाहरण जयपुर के नज़दीक कस्बा-ए-कोटपुतली में देखने को मिला। जहाँ नेशनल हाईवे से जुड़ी रोड को "तथाकथित" सरकारी मापदण्ड के अनुसार चौड़ा करने और अस्थायी अतिक्रमण को हटाने के लिए लगभग 150 घरों और दुकानों की भारी तोड़-फोड़ की गई। कड़ियों के पास खेतड़ी राज्य के पट्टे मौजूद थे, अन्य के पास निगम द्वारा स्वीकृत व पास किये गये नक्शे थे। पर, न्याय के लिए कहीं गुहार की जाये, क्योंकि स्थानीय प्रशासन के लिए तो विधायक उस क्षेत्र का "घोषित मुख्यमंत्री" था। पीड़ित जनता ने न्यायालय से आदेश प्राप्त किये पर जनता यह भूल गई कि न्यायालय के आदेश भी अंततोगत्वा प्रशासन ही लागू करता है।

गहलोत के राज के जाने की वजह उनकी सोच, "फिलॉसफी" का सुनियोजित, सटीक क्रियान्वन था। अभाव था या कमी थी तो नैतिक मूल्यों की, स्वस्थ प्रजातंत्रीय फिलॉसफी की,

जिसमें शासन की धुरी होती है जनता, न कि राजा, क्योंकि, राजा की बेलगाम महत्वाकांक्षा का खामियाजा जनता उठाती है और जनता में आक्रोश फैलता है, और इसी आक्रोश की वजह से गहलोत की हार हुई, उनकी सत्ता गई।

गहलोत जन आक्रोश की आंठी के कारण हार गये, यह तथ्य महत्वपूर्ण है, पर इससे भी ज्यादा जरूरी है, कि जनता गहलोत द्वारा प्रतिपादित शासन प्रणाली को जाने व पहचाने जिसने हमारे प्रजातंत्र को इतना विकृत बनाया।

गहलोत के तीसरे कार्यकाल में, भ्रष्टाचार की चरम सीमा की पृष्ठभूमि में अतिरिक्त मुख्य सचिव स्तर के एक कार्यरत अफसर ने मित्रतापूर्ण ढंग से मुस्कराते हुए इन हालात के सन्दर्भ में कहा, "आप सरकार से गलत समय लड़ लिये, यह लड़ने का नहीं कमाने का समय था। कोई सा भी प्रोजेक्ट ले जाइये मुख्यमंत्री के पास, प्रोजेक्ट पर चिन्तन, उससे लाभ की चर्चा नहीं होती, केवल यह पूछा जाता है, तुम्हें कितना लाभ होगा और उसमें "हमारी" क्या हिस्सेदारी होगी।"

पुरानी लोकोक्ति थी, "बर्बाद गुलिस्तां करने को एक ही उल्लू काफी है", पर गहलोत ने तो हर डाल पर चुन-चुन कर हर स्तर पर "उल्लू" बिठा दिया, और साथ में "फ्रीडम" दे दी कि "कमाओ और खाओ" का सिद्धान्त पूर्णतया स्वीकार्य है।

में, उस समय की मान्यता व सभ्य समाज के तौर तरीकों से परिभाषित अधर्म, पाप-फरेब आदि की अवांछनीयता दब जाती, उभर कर सामने नहीं आती और राम के वनवास का अधोषित उद्देश्य अपूर्ण रहता।

गहलोत जन आक्रोश की आंठी के कारण हार गये, यह तथ्य महत्वपूर्ण है, पर इससे भी ज्यादा जरूरी है, कि जनता गहलोत द्वारा प्रतिपादित शासन प्रणाली को जाने व पहचाने, जिसने हमारे प्रजातंत्र को इतना विकृत बनाया। इतना भयावह व डरावना बनाया।

जिस बेशर्मा से, निर्दयता से, भ्रष्टाचार पनपाया गया, इतनी बेशर्मा, क्रूरता पहले कभी नहीं देखी गई। जायज़-नाजायज़ काम की कुंजी पैसा हो गयी। सरकारी महकमे "कलैक्शन केन्द्र" बन गये और हर सक्षम अधिकारी व जनप्रतिनिधि "कलैक्शन एजेंट"। पुरानी लोकोक्ति थी, "बर्बाद गुलिस्तां करने को एक ही उल्लू काफी है", पर गहलोत ने तो हर डाल पर चुन-चुन कर हर स्तर पर "उल्लू" बिठा दिया, और साथ में "फ्रीडम" दे दी कि "कमाओ और खाओ" का सिद्धान्त पूर्णतया स्वीकार्य है। उर, इस बात का है, कि हर स्तर पर "उल्लूओं" को खून मुंह लग गया है, पांच साल में। अब यह "सिस्टम" ठीक होने में कई दशक लगेंगे, और जनता ही इसे ठीक कर सकती है, "बुद्धिमानी" का भाषण नहीं। मन में उत्कण्ठा गहलोत के बारे में बात करने की इसलिए रहती है कि, जनता पूरी तरह समझ ले कि "सिस्टम" को क्या हानि हुई। क्योंकि गहलोत के सोच व कार्य प्रणाली का एक और अनुभव शायद राजस्थान का प्रजातंत्र नहीं झेल पायेगा।

सन् 1989 की बात है, अशोक गहलोत जोधपुर से लोकसभा चुनाव लड़ रहे थे उनके आग्रह पर मैं चुनाव कवर करने जोधपुर गया था।

गहलोत के तीसरे कार्यकाल में, भ्रष्टाचार की चरम सीमा की पृष्ठभूमि में अतिरिक्त मुख्य सचिव स्तर के एक कार्यरत अफसर ने मित्रतापूर्ण ढंग से मुस्कराते हुए इन हालात के सन्दर्भ में कहा, "आप सरकार से गलत समय लड़ लिये, यह लड़ने का नहीं कमाने का समय था। कोई सा भी प्रोजेक्ट ले जाइये मुख्यमंत्री के पास, प्रोजेक्ट पर चिन्तन, उससे लाभ की चर्चा नहीं होती, केवल यह पूछा जाता है, तुम्हें कितना लाभ होगा और उसमें "हमारी" क्या हिस्सेदारी होगी।"

आर.टी.डी.सी. के होटल घूमर में ठहरा था। अशोक गहलोत का मैसैज आया, जोधपुर के उद्योगपति धेवर चन्द कानूनगो ने शहर के बड़े-बड़े व्यापारियों को नारसे पर बुलाया है, गहलोत भी रहेंगे, आप भी आइये, अच्छी "न्यूज़" मिलेगी। नारसे के बाद कानूनगो ने 150-200 बड़े आमंत्रित